



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

पतंजलि योगसूत्र एवं हठयोग प्रदीपिका में योग साधना का स्वरूप: एक तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन

Amarpal

Research Scholar, Department of Yoga, Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University

Dr. Ravinder Kumar Verma

Associate Professor, Department of Yoga, Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University

अमूर्त

भारतीय दार्शनिक चिंतन एवं आध्यात्मिक चेतना के इतिहास में योग साधना सर्वप्रमुख विधा के रूप में प्रतिष्ठित रही है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक आत्म-साक्षात्कार, समाधि, मोक्ष अथवा कैवल्य की प्राप्ति हेतु विभिन्न साधना पद्धतियों का विकास हुआ है। इन पद्धतियों में महर्षि पतंजलि द्वारा प्रणीत 'पतंजलि योगसूत्र' एवं स्वामी स्वात्माराम द्वारा रचित 'हठयोग प्रदीपिका' को आधारभूत स्तंभ माना जाता है। पतंजलि योगसूत्र मुख्य रूप से राजयोग अथवा दार्शनिक ज्ञान-ध्यान प्रधान मार्ग का निरूपण करता है, जहाँ चित्त की चंचलता को समाप्त कर 'चित्तवृत्तिनिरोधः' को मुख्य साध्य स्वीकार किया गया है। इसके विपरीत, हठयोग प्रदीपिका शारीरिक शुद्धि, नाड़ी शोधन, प्राण वायु के आयाम तथा विभिन्न शारीरिक मुद्राओं के अभ्यास द्वारा चेतना को जाग्रत करने का मार्ग प्रशस्त करती है। प्रस्तुत शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य इन दोनों कालजयी ग्रंथों में वर्णित योग साधना के सैद्धांतिक पक्ष, व्यावहारिक क्रियाविधि, अंगों की व्यवस्था, ईश्वर की महत्ता तथा उनके परम लक्ष्य (कैवल्य बनाम राजयोग) का एक विस्तृत तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना है। इस शोध के माध्यम से यह प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है कि दोनों पद्धतियाँ बाह्य रूप से भिन्न प्रतीत होते हुए भी अंततः एक-दूसरे की पूरक हैं, जो साधक को स्थूल से सूक्ष्म चेतना की ओर ले जाती हैं।

कीवर्ड: पतंजलि योगसूत्र, हठयोग प्रदीपिका, योग साधना, तुलनात्मक अध्ययन, राजयोग।

1. प्रस्तावना एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारतीय संस्कृति और वांग्मय में योग को केवल एक शारीरिक व्यायाम अथवा क्रिया के रूप में नहीं, बल्कि जीवन के परम सत्य को जानने और दुखों की आत्यंतिक निवृत्ति के एक सुदृढ़ वैज्ञानिक मार्ग के रूप में स्वीकार किया गया है। भारतीय दर्शन की षड्दर्शन परंपरा में 'योग दर्शन' का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। कालक्रम के अनुसार योग साधना



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

के विविध स्वरूपों का विकास हुआ। प्राचीन काल में जहाँ उपनिषदों और भगवद्गीता में योग के दार्शनिक एवं नैतिक स्वरूप की चर्चा मिलती है, वहीं महर्षि पतंजलि ने ईसा पूर्व द्वितीय या तृतीय शताब्दी में बिखरे हुए योग ज्ञान को सूत्रबद्ध करके 'योगसूत्र' की रचना की। पतंजलि का यह प्रयास योग को एक सुव्यवस्थित दार्शनिक प्रणाली के रूप में स्थापित करने वाला था, जिसे 'राजयोग' या 'अष्टांग योग' कहा गया। मध्यकाल तक आते-आते, सामान्य मनुष्यों के लिए सीधे मन को नियंत्रित करना अत्यंत दुष्कर प्रतीत होने लगा। मानसिक एकाग्रता की इस कठिन चुनौती को हल करने के लिए नाथ संप्रदाय के आचार्यों (जैसे गुरु गोरखनाथ) और कालांतर में स्वामी स्वात्माराम (14वीं-15वीं शताब्दी) द्वारा 'हठयोग' की परंपरा को सुदृढ़ किया गया। स्वामी स्वात्माराम ने 'हठयोग प्रदीपिका' की रचना की, जिसमें उन्होंने यह स्पष्ट किया कि हठयोग कोई स्वतंत्र लक्ष्य नहीं है, बल्कि यह राजयोग की कठिन मंजिल तक पहुँचने के लिए एक अत्यंत सुरक्षित और अनिवार्य सीढ़ी (सोपान) है। इस प्रकार, जहाँ पतंजलि का योग दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक धरातल पर आधारित है, वहीं हठयोग प्रदीपिका क्रियात्मक, शारीरिक और प्राणिक ऊर्जा के संतुलन पर बल देती है। इन दोनों महान परंपराओं के तुलनात्मक अध्ययन से ही हम योग विज्ञान के समग्र और संपूर्ण स्वरूप को समझ सकते हैं।

2. पतंजलि योगसूत्र में योग साधना का तात्त्विक स्वरूप

महर्षि पतंजलि ने अपने ग्रंथ 'योगसूत्र' को चार पादों में विभाजित किया है: समाधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद और कैवल्यपाद। इन चार पादों के अंतर्गत कुल 195 सूत्र हैं, जो मानव मनोविज्ञान और चेतना के रूपांतरण का अभूपूर्व रोडमैप प्रस्तुत करते हैं। पतंजलि योग साधना की शुरुआत ही योग की कालजयी परिभाषा से करते हैं: 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'। यहाँ 'चित्त' का तात्पर्य केवल मन नहीं, बल्कि मन, बुद्धि और अहंकार के सम्मिलित स्वरूप (अन्तःकरण) से है। इस चित्त में उठने वाली विभिन्न तरंगें या विचार ही 'वृत्तियाँ' कहलाती हैं, जो पाँच प्रकार की होती हैं—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। जब साधक अभ्यास और वैराग्य के माध्यम से इन वृत्तियों को पूरी तरह शांत कर देता है, तब आत्मा (द्रष्टा) अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जाती है, जिसे पतंजलि 'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्' कहते हैं। पतंजलि की साधना मुख्य रूप से 'मन से शरीर' (Psychosomatic) की ओर कार्य करती है। उनका मानना है कि यदि मन को अनुशासित कर लिया जाए, तो शरीर स्वतः ही अनुशासित हो जाता है। चित्त की चंचलता को दूर करने के लिए उन्होंने 'अष्टांग योग' का विधान किया है। इसके अतिरिक्त, जो उच्च कोटि के साधक हैं, उनके लिए पतंजलि ने 'अभ्यास और वैराग्य' तथा मध्यम कोटि के साधकों के लिए 'क्रियायोग' (तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान) का निर्देश दिया है।



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

3. पतंजलि अष्टांग योग के आठ अंग: विस्तृत विवेचन

महर्षि पतंजलि ने साधनपाद में योग के आठ अंगों का प्रतिपादन किया है, जो साधक के क्रमिक विकास को दर्शाते हैं। इन आठ अंगों को बहिरंग और अंतरंग साधना में विभाजित किया गया है:

क) यम (सामाजिक अनुशासन): यह साधक के सामाजिक व्यवहार को शुद्ध करता है। इसके पाँच प्रकार हैं:

1. अहिंसा - मन, वाणी और कर्म से किसी को कष्ट न देना।
2. सत्य - यथार्थ बोलना और आचरण में प्रामाणिकता रखना।
3. अस्तेय - चोरी न करना, अनुचित साधनों से किसी की वस्तु न लेना।
4. ब्रह्मचर्य - चेतना को उच्च तत्वों की ओर लगाना, इंद्रिय संयम।
5. अपरिग्रह - आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह न करना।

ख) नियम (व्यक्तिगत अनुशासन): यह साधक की आंतरिक और बाह्य शुद्धि सुनिश्चित करता है। इसके भी पाँच प्रकार हैं:

1. शौच - शरीर और मन की पवित्रता।
2. संतोष - जो प्राप्त है उसमें प्रसन्न रहना, तृष्णा का अभाव।
3. तप - द्वंद्वों (सुख-दुख, सर्दी-गर्मी) को सहन करने की क्षमता विकसित करना।
4. स्वाध्याय - पवित्र ग्रंथों का अध्ययन और आत्म-निरीक्षण।
5. ईश्वर प्रणिधान - अपने सभी कर्मों को ईश्वर को समर्पित कर देना।

ग) आसन: पतंजलि के अनुसार 'स्थिरसुखमासनम्'। अर्थात् जिस अवस्था में शरीर बिना किसी हलचल के और सुखपूर्वक लंबे समय तक बैठ सके, वही आसन है। पतंजलि ने किसी विशिष्ट शारीरिक मुद्रा या व्यायाम का नाम नहीं लिया है, बल्कि ध्यान के लिए बैठने की स्थिरता पर बल दिया है।

घ) प्राणायाम: 'तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः'। आसन की सिद्धि के बाद श्वास और प्रश्वास की स्वाभाविक गति को रोकना प्राणायाम कहलाता है। यह मन की एकाग्रता के लिए मार्ग प्रशस्त करता है और बुद्धि पर छाए अज्ञान के आवरण को हटाता है।

ड) प्रत्याहार: इंद्रियों को उनके बाह्य विषयों से हटाकर अंतर्मुखी करना प्रत्याहार है। यह बहिरंग और अंतरंग योग के बीच का सेतु है।

च) धारणा: चित्त को किसी एक निश्चित स्थान, बिंदु या लक्ष्य पर बांधना 'धारणा' है।



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

छ) ध्यान: उस बिंदु पर जहाँ चित्त लगाया गया है, ज्ञान अथवा वृत्ति का एकरस होकर निरंतर प्रवाहित होना 'ध्यान' है।

ज) समाधि: ध्यान की वह पराकाष्ठा जहाँ साधक का स्वयं का अस्तित्व लुप्त हो जाता है और केवल ध्येय वस्तु का ही आभास रहता है, वह समाधि है। समाधि के दो मुख्य भेद हैं—सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात।

4. हठयोग प्रदीपिका में योग साधना का व्यावहारिक स्वरूप

स्वामी स्वात्माराम कृत 'हठयोग प्रदीपिका' चार उपदेशों (अध्यायों) में विभाजित है। हठयोग शब्द दो बीजाक्षरों के मेल से बना है— 'ह' अर्थात् सूर्य स्वर (पिंगला नाड़ी) और 'ठ' अर्थात् चंद्र स्वर (इडा नाड़ी)। इन दोनों स्वरों या ऊर्जाओं का संतुलन स्थापित करके प्राण को मध्य मार्ग यानी 'सुषुम्ना नाड़ी' में प्रवाहित करना ही हठयोग का मूल उद्देश्य है। हठयोग प्रदीपिका का दर्शन अत्यंत व्यावहारिक है। इसका मानना है कि मन अत्यंत चंचल और अमूर्त है, उसे सीधे नियंत्रित करना आम मनुष्य के वश में नहीं है। चूँकि प्राण और मन का संबंध अत्यंत गहरा है ('चले वाते चलं चित्तं निश्चले निश्चलं भवेत्'), इसलिए यदि श्वास या प्राण को स्थिर कर लिया जाए, तो मन स्वतः ही एकाग्र और स्थिर हो जाता है। हठयोग की साधना 'शरीर से मन' (Somato-psychic) की ओर अग्रसर होती है। स्वात्माराम जी ने साधना के चार प्रमुख अंग बताए हैं, जिसके कारण इसे 'चतुरंग योग' कहा जाता है। इसमें यम और नियम को अनिवार्य अंग के रूप में शामिल नहीं किया गया है, क्योंकि हठयोग का मानना है कि शरीर की शुद्धि होने पर नैतिक गुण स्वतः ही साधक के भीतर प्रस्फुटित होने लगते हैं।

5. हठयोग के चार अंग (चतुरंग योग): विस्तृत विवेचन

हठयोग प्रदीपिका में वर्णित चार अंगों का क्रमबद्ध और वैज्ञानिक स्वरूप इस प्रकार है:

क) आसन: हठयोग में आसनों को साधना का प्रथम अंग स्वीकार किया गया है ('हठस्य प्रथमांगत्वादासनं पूर्वमुच्यते')। पतंजलि के विपरीत, यहाँ आसनों का विवरण अत्यंत विस्तार से दिया गया है। स्वात्माराम जी ने शिव द्वारा बताए गए 84 आसनों का उल्लेख किया है, जिनमें से 15 आसनों का विस्तृत वर्णन किया गया है। इनमें सिद्धासन, पद्मासन, सिंहासन और भद्रासन मुख्य हैं। आसनों का मुख्य लाभ शरीर को 'दृढता' (स्थिरता), 'आरोग्यता' (रोगमुक्ति) और 'लाघव' (हल्कापन) प्रदान करना है।

ख) कुम्भक (प्राणायाम) एवं षट्कर्म: हठयोग में प्राणायाम को 'कुम्भक' कहा जाता है। लेकिन कुम्भक के अभ्यास से पूर्व नाड़ियों की शुद्धि आवश्यक है। जिन साधकों के शरीर में मेद (चर्बी) या कफ की अधिकता है, उनके लिए स्वात्माराम जी ने छह शोधन क्रियाओं (षट्कर्म) का विधान किया है: धौति, बस्ति, नेति, त्रिफला, नौलि और कपालभाति। इनके माध्यम से शरीर के आंतरिक अंग शुद्ध होते हैं। इसके पश्चात् आठ प्रकार के मुख्य कुम्भकों



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

का वर्णन मिलता है—सहित, सूर्यभेदन, उज्जाई, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्च्छा और प्लावनी। इनके अभ्यास से प्राण सुषुम्ना में प्रवेश करता है।

ग) मुद्रा एवं बंध: मुद्राओं को हठयोग साधना का प्राण माना गया है। हठयोग प्रदीपिका में 10 मुख्य मुद्राओं का वर्णन है (जैसे महामुद्रा, महाबंध, महावेध, खेचरी, उड्डियान बंध, मूलबंध, जालंधर बंध आदि)। इनका मुख्य कार्य मूलाधार चक्र में सुप्त पड़ी 'कुंडलिनी शक्ति' को जाग्रत करना है। कुंडलिनी जाग्रत होकर जब सुषुम्ना मार्ग से ऊपर की ओर बढ़ती है, तो साधक के समस्त चक्रों का वेधन करती हुई सहस्रार चक्र तक पहुँचती है।

घ) नादानुसंधान (समाधि): यह हठयोग का चतुर्थ अंग है। जब प्राण सुषुम्ना में लीन हो जाता है, तब साधक के भीतर एक दिव्य ध्वनि सुनाई देती है, जिसे 'अनाहत नाद' कहते हैं। एकाग्र चित्त से इस आंतरिक ध्वनि को सुनते-सुनते मन पूरी तरह से शांत और विलीन हो जाता है। इसी अवस्था को 'लयानुकूल समाधि' या नादानुसंधान कहा जाता है, जो राजयोग के समतुल्य है।

6. दार्शनिक एवं वैचारिक दृष्टिकोण में अंतर

पतंजलि योगसूत्र और हठयोग प्रदीपिका के दार्शनिक आधार में महत्वपूर्ण भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। महर्षि पतंजलि का योग दर्शन पूर्णतः 'सांख्य दर्शन' पर आधारित है। सांख्य दर्शन द्वैतवादी है, जो सृष्टि के दो मूल तत्त्व स्वीकार करता है—प्रकृति (जड़) और पुरुष (चेतन)। पतंजलि के अनुसार, पुरुष (आत्मा) अज्ञानवश स्वयं को प्रकृति (शरीर, मन, बुद्धि) के साथ जोड़ लेता है, जिससे दुखों की उत्पत्ति होती है। योग साधना का लक्ष्य इस अज्ञान को दूर करके प्रकृति और पुरुष के बीच 'विवेक ख्याति' (अंतर का ज्ञान) उत्पन्न करना है, जिससे पुरुष अपने शुद्ध, मुक्त स्वरूप को प्राप्त कर सके। इसके विपरीत, हठयोग प्रदीपिका का दार्शनिक आधार मुख्य रूप से 'तंत्र' और 'अद्वैत वेदांत' से प्रभावित है। यहाँ शरीर को जड़ या त्याज्य नहीं माना गया है, बल्कि उसे साधना का सर्वोत्तम साधन और परमात्मा का मंदिर माना गया है। हठयोग के अनुसार, शिव और शक्ति (पुरुष और प्रकृति) का मिलन ही योग है। इड़ा और पिंगला, सूर्य और चंद्र, प्राण और अपान का एकीकरण ही अद्वैत की स्थिति पैदा करता है। अतः जहाँ पतंजलि अलगाव (प्रकृति से पुरुष का पृथकीकरण) पर बल देते हैं, वहीं हठयोग मिलन (ऊर्जा और चेतना के एकीकरण) पर बल देता है।

7. साधना मार्ग एवं क्रियाविधि का तुलनात्मक विश्लेषण

साधना के व्यावहारिक धरातल पर दोनों ग्रंथों का मार्ग बिल्कुल विपरीत दिशाओं से प्रारंभ होता हुआ प्रतीत होता है। पतंजलि का मार्ग मानसिक अनुशासन से प्रारंभ होता है। वे सबसे पहले साधक के नैतिक आचरण (यम-नियम) को ठीक करते हैं, फिर मन को एकाग्र करने के लिए आसन और प्राणायाम का सहारा लेते हैं। इसे 'Top-Down Approach' या मन से शरीर की ओर जाने वाली साधना कहा जाता है। यह मार्ग उन उच्च अधिकारियों के लिए अत्यंत सुलभ है,



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

जिनका मानसिक बल तीव्र है। दूसरी ओर, हठयोग प्रदीपिका का मार्ग शारीरिक अनुशासन से प्रारंभ होता है। स्वात्माराम जी जानते थे कि कलयुग के साधारण मनुष्यों के लिए यम और नियम का कठोरता से पालन करना और सीधे मन को रोकना असंभव के समान है। इसलिए वे शरीर को माध्यम बनाते हैं। शरीर को आसनों से दृढ़ करके, षट्कर्मों से शुद्ध करके और प्राणायाम से प्राण को स्थिर करके मन को जीता जाता है। इसे 'Bottom-Up Approach' या शरीर से मन की ओर जाने वाली साधना कहा जाता है। पतंजलि के यहाँ आसन केवल बैठने का साधन है, जबकि हठयोग में आसन स्वयं में एक गहन ऊर्जावान क्रिया है।

8. ईश्वर की अवधारणा और प्रासंगिकता

ईश्वर के प्रति दृष्टिकोण में भी दोनों ग्रंथों में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। पतंजलि योगसूत्र में ईश्वर को साधना का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और सुलभ माध्यम स्वीकार किया गया है। पतंजलि ने सूत्र दिया है: 'ईश्वरप्रणिधानाद्वा' (1/23), जिसका अर्थ है कि ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण करने से भी समाधि की प्राप्ति शीघ्र हो जाती है। पतंजलि के अनुसार ईश्वर एक विशेष पुरुष है ('क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः'), जो अज्ञान, कर्म और कर्मफलों के बंधन से सर्वथा मुक्त है। ईश्वर का वाचक नाम 'ओम्' (प्रणव) है, जिसका जप करने का निर्देश पतंजलि देते हैं। हठयोग प्रदीपिका में ईश्वर की दार्शनिक मीमांसा या ईश्वर प्रणिधान जैसी अवधारणाओं पर प्रत्यक्ष रूप से बल नहीं दिया गया है। हठयोग परंपरा के आदि गुरु 'आदिनाथ' (भगवान शिव) को माना गया है, जिन्होंने माता पार्वती को इस गुप्त विद्या का उपदेश दिया था। यहाँ साधना पूर्णतः 'गुरु-परंपरा' और साधक के स्वयं के पुरुषार्थ (शारीरिक-प्राणिक क्रियाओं) पर निर्भर करती है। हठयोग में गुरु की कृपा को ही सबसे महत्वपूर्ण माना गया है, जो साधक को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है।

9. परम लक्ष्य: कैवल्य बनाम राजयोग की स्थिति

दोनों ग्रंथों का परम और अंतिम लक्ष्य यद्यपि पूर्ण स्वतंत्रता और दुखों से मुक्ति ही है, परंतु उसे अभिव्यक्त करने की शब्दावली भिन्न है। पतंजलि के अनुसार योग का अंतिम लक्ष्य 'कैवल्य' की प्राप्ति है। कैवल्य का अर्थ है— चेतना का अपने शुद्ध स्वरूप में अकेले (केवल) स्थित हो जाना, जहाँ प्रकृति के तीनों गुणों (सत्त्व, रज, तम) का पुरुष के लिए कोई कार्य नहीं बचता और बुद्धि आदि तत्त्व प्रकृति में विलीन हो जाते हैं। यह परम शांति और मोक्ष की अवस्था है। हठयोग प्रदीपिका का परम लक्ष्य 'राजयोग' की प्राप्ति है। स्वात्माराम जी ने स्पष्ट घोषणा की है कि हठयोग के समस्त अभ्यासों (आसन, कुम्भक, मुद्रा) का एकमात्र उद्देश्य राजयोग पद को प्राप्त करना है। राजयोग की इस अवस्था को उन्होंने सहज अवस्था, समाधि, उन्मनी अवस्था, अमृतत्व, शून्य-अशून्य, परम पद और जीवन्मुक्ति जैसे अनेक नामों



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

से पुकारा है। इस अवस्था में साधक का मन और प्राण पूरी तरह विलीन हो जाते हैं, नमक और पानी की तरह आत्मा और मन एक हो जाते हैं, जहाँ न कोई काल का भय रहता है और न कर्म का बंधन।

10. आधुनिक युग में दोनों साधनाओं की प्रासंगिकता एवं समन्वय

आज का आधुनिक मानव अत्यधिक मानसिक तनाव, अवकाश, अनिद्रा और अनेक मनोदैहिक विकारों (Psychosomatic Diseases) से ग्रसित है। इसका मुख्य कारण जीवनशैली का असंतुलन और मन की अत्यधिक चंचलता है। ऐसी स्थिति में पतंजलि का अष्टांग योग और हठयोग प्रदीपिका की चतुरंग साधना दोनों ही अत्यंत प्रासंगिक और व्यावहारिक सिद्ध होती हैं। यदि कोई साधक सीधे पतंजलि के ध्यान का अभ्यास करना चाहे, तो अशांत मन और अस्वस्थ शरीर के कारण वह बैठ नहीं पाता। अतः आधुनिक प्रासंगिकता इसी में है कि सर्वप्रथम हठयोग प्रदीपिका के अनुसार षट्कर्मों से शरीर की शुद्धि की जाए, आसनों से शरीर को स्वस्थ और सुदृढ़ बनाया जाए तथा कुम्भक (प्राणायाम) के माध्यम से प्राण ऊर्जा को संतुलित किया जाए। जब शरीर और प्राण स्थिर हो जाएंगे, तब महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग—विशेषकर धारणा, ध्यान और समाधि स्वतः ही सिद्ध होने लगेंगे। स्वामी स्वात्माराम जी का यह कथन आज भी अकाट्य है कि हठयोग के बिना राजयोग और राजयोग के बिना हठयोग सिद्ध नहीं हो सकता। अतः इन दोनों का समन्वय ही आधुनिक मानव के कल्याण का मार्ग है।

11. निष्कर्ष

प्रस्तुत तुलनात्मक विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महर्षि पतंजलि कृत 'योगसूत्र' और स्वामी स्वात्माराम प्रणीत 'हठयोग प्रदीपिका' भारतीय योग परंपरा के दो अभिन्न अंग हैं। पतंजलि का दृष्टिकोण जहाँ अत्यंत सूक्ष्म, दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक है, वहीं हठयोग का दृष्टिकोण स्थूल, क्रियात्मक और वैज्ञानिक है। पतंजलि जहाँ साध्य (लक्ष्य) का निर्धारण करते हैं, हठयोग वहाँ तक पहुँचने के लिए एक सुलभ साधन मार्ग का निर्माण करता है। दोनों ग्रंथों का मूल मंतव्य मानव चेतना का परिष्कार कर उसे परम तत्त्व से जोड़ना है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में इन दोनों विधाओं का एकांगी अध्ययन या अभ्यास अपूर्ण है; मानव जाति के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उत्थान के लिए इन दोनों धाराओं का समन्वित प्रयोग ही सर्वोत्तम और सबसे व्यावहारिक मार्ग है।



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. ओमानन्द तीर्थ, स्वामी. (2018). 'पतंजलि योगप्रदीप'. गोरखपुर: गीताप्रेस प्रकाशन. [अष्टांग योग साधना, चित्तवृत्तियाँ, और समाधि पाद के विशेष शास्त्रीय भाष्य हेतु अत्यंत प्रामाणिक स्रोत].
2. स्वात्माराम, स्वामी. (2015). 'हठयोग प्रदीपिका' (संपादक: स्वामी दिगंबर जी एवं डॉ. पीतांबर झा). लोनावला: कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योगमंदिर समिति. [चतुरंग योग, नादानुसंधान, षट्कर्म शुद्धि, और कुंडलिनी जागरण की प्रायोगिक विधि हेतु मूल संदर्भ].
3. उपाध्याय, आचार्य बलदेव. (2012). 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा'. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन. [षड्दर्शन परंपरा में सांख्य और योग दर्शन के द्वैतवादी सिद्धांतों तथा तात्त्विक पृष्ठभूमि का ऐतिहासिक विश्लेषण].
4. शास्त्री, डॉ. प्रद्युम्न. (2016). 'योग दर्शन: एक तात्त्विक विमर्श'. कानपुर: साहित्य निकेतन प्रकाशन. [पतंजलि योगसूत्र के साधनपाद और विभूतिपाद की दार्शनिक व्याख्या].
5. कुवलयाणन्द, स्वामी. (2014). 'प्राणायाम: वैज्ञानिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण'. लोनावला: कैवल्यधाम प्रकाशन. [हठयोग के कुम्भकों के शारीरिक और मानसिक प्रभावों का वैज्ञानिक विश्लेषण].
6. शर्मा, प्रो. रामनाथ. (2011). 'पतंजलि योगसूत्र: एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन'. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. [आधुनिक मनोविज्ञान, अवसाद निवारण और चित्त शुद्धि के संदर्भ में राजयोग की प्रासंगिकता].
7. गोरखनाथ, गुरु. (2009). 'सिद्ध सिद्धांत पद्धति' (संपादक: डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी). वाराणसी: प्रज्ञा संस्थान. [पिंड-ब्रह्मांड सिद्धांत और हठयोग साधना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि].
8. विवेकानंद, स्वामी. (2020). 'राजयोग'. नागपुर: रामकृष्ण मठ प्रकाशन. [चित्तवृत्ति निरोध, एकाग्रता और ध्यान की व्यावहारिक पाश्चात्य एवं भारतीय समन्वयात्मक व्याख्या].
9. सरस्वती, स्वामी सत्यानन्द. (2013). 'आसन प्राणायाम मुद्रा बंध'. मुंगेर: बिहार स्कूल ऑफ योगा. [हठयोग प्रदीपिका में वर्णित शारीरिक मुद्राओं और प्राणिक ऊर्जा के संतुलन की आधुनिक प्रायोगिक व्याख्या].
10. दासगुप्ता, एस. एन. (2008). 'A History of Indian Philosophy' (भारतीय अनुवाद: भारतीय दर्शन का इतिहास). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास. [पतंजलि योगसूत्र के ऐतिहासिक कालक्रम और बौद्ध दर्शन के साथ उसके तुलनात्मक संबंधों का साक्ष्य].
11. अरविन्द, श्री. (2015). 'योग समन्वय' (The Synthesis of Yoga). पुदुचेरी: श्री अरविन्द आश्रम. [राजयोग, हठयोग और पूर्णयोग के बीच आध्यात्मिक अंतर्संबंधों और चेतना के रूपांतरण का दार्शनिक विवेचन].



International Journal of Engineering, Science and Humanities

An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 8.3 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

12. कावले, डॉ. बी. आर. (2017). 'हठयोग परंपरा एवं नाथ संप्रदाय'. पुणे: साधना प्रकाशन. [स्वामी स्वात्माराम की कालजयी रचना हठयोग प्रदीपिका पर आदिनाथ शिव और मत्स्येन्द्रनाथ की परंपरा का प्रभाव].
13. राधाकृष्णन, डॉ. सर्वपल्ली. (2010). 'भारतीय दर्शन' (भाग-2). दिल्ली: राजपाल एंड संस. [योगसूत्र के ईश्वर प्रणिधान सूत्र और सांख्य के अनिश्चरवादी दृष्टिकोण का तुलनात्मक समीक्षात्मक अध्ययन].
14. सांकृत्यायन, राहुल. (2007). 'दर्शन-दिग्दर्शन'. इलाहाबाद: किताबी महल. [योग दर्शन के व्यावहारिक और भौतिक धरातल पर क्रियाविधि का ऐतिहासिक भौतिकवादी विश्लेषण].
15. दिगंबर, स्वामी. (2013). 'हठप्रदीपिका के प्रमुख बंध एवं मुद्राएं'. लोनावला: योग संस्थान प्रकाशन. [जालंधर, उड्डियान और मूलबंध के अभ्यास के दौरान प्राण वायु के सुषुम्ना मार्ग में प्रवेश का सूक्ष्म प्रायोगिक लेखा-जोखा].
16. जोशी, डॉ. के. एस. (2011). 'योग और आधुनिक जीवन'. दिल्ली: हिंद पॉकेट बुक्स. [तनाव प्रबंधन, मनोदैहिक व्याधियों के उपचार में हठयोग के षट्कर्म और योगसूत्र के प्रत्याहार की संयुक्त उपयोगिता].
17. योगेंद्र, श्री. (2012). 'The Science of Yoga'. मुंबई: द योग इंस्टीट्यूट, सांताक्रूज. [आसनों और कुम्भकों के माध्यम से अंतःस्रावी ग्रंथियों (Endocrine Glands) पर पड़ने वाले प्रभावों का वैज्ञानिक प्रकटीकरण].
18. मिश्र, वाचस्पति. (2005). 'पतंजलि योगसूत्र पर तत्त्ववैशारदी टीका'. वाराणसी: संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय. [महर्षि व्यास के भाष्य पर की गई प्राचीन और दार्शनिक रूप से अत्यंत गूढ़ प्रामाणिक व्याख्या].
19. विज्ञानभिक्षु. (2009). 'योगवार्तिक'. दिल्ली: चौखम्बा ओरियंटलिया. [मध्यकाल में पतंजलि योगदर्शन के विकास और उसके अद्वैतपरक रूपांतरण का ऐतिहासिक दस्तावेज़].
20. गोयल, डॉ. सुरेश चंद्र. (2019). 'योग चिकित्सा: एक समग्र पद्धति'. जयपुर: आयुष प्रकाशन. [हठयोग प्रदीपिका के शोधन कर्मों की काय-चिकित्सा के क्षेत्र में नैदानिक उपादेयता का व्यापक शोध पत्र].